वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 424
ISBN-978-93-84003-12-8

वर्तमान पट्टाचार्य श्री अभिनन्दनसागर पूजा एवं परिचय

–मंगल प्रेरणा –

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी, परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी

–प्रस्तुति –

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज की मूल परम्परा के वर्तमान पट्टाचार्य श्री अभिनंदनसागर जी महाराज के 46वें मुनि दीक्षा जयंती महोत्सव के शुभ अवसर पर फाल्गुन शु. अष्टमी, 8-9 मार्च 2014 के अन्तर्गत प्रकाशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.
फोन नं.- (01233) 280184, 280994
Website : www.jambudweep.org, E-mail : jambudweeptirth@gmail.com
Facebook : jaintirthjambudweep

प्रथम संस्करण	वीर नि. सं. 2540	मूल्य
1100 प्रतियाँ	फाल्गुन शु. अष्टमी, 8-9 मार्च 2014	20/-रु.

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएँ भी प्रकाशित होती रहती हैं।

–: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :–

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी
(दो बार डी.लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत)

–: मार्गदर्शन :–

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी
(पीएच.डी. की मानद उपाधि से अलंकृत)

–: निर्देशक एवं सम्पादकः–

कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

–: प्रबंध सम्पादक :–

जीवन प्रकाश जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

कम्पोजिंग - ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

सम्पादकीय

–कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी

आत्मोन्नति के मार्ग में सत्साहित्य एक प्रकृष्ट आलम्बन है, जो साधक पुरुष के लिए साधना मार्ग में साध्य की ओर बढ़ने के लिए निमित्तभूत है। सद्गुरु सर्वत्र उपलब्ध नहीं होते परन्तु देव, शास्त्र और गुरु की महिमा का परिज्ञान कराने वाला सुसाहित्य सर्वत्र उपलब्ध हो जाता है, जिसे आत्मसात कर प्राणी अपने जीवन को समुन्नत बना लेता है।

आचार्यश्री कुन्दकुन्दादि दिग्गज और महान आचार्यों ने भी सत्साहित्य की रचना और स्वाध्याय में अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत किया और अनेक अलौकिक एवं महान रचनाएँ प्रदान कर जैनशासन पर महान उपकार किया। साहित्य लेखन के उसी क्रम में चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागर महाराज के प्रथम पट्टाचार्य आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज की शिष्या साक्षात् सरस्वतीस्वरूपा परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के नाम की अनुगूंज सम्पूर्ण विश्व में है और उसी क्रम में उनकी शिष्या परमपूज्य प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी की सारभूत एवं सरल, सरस, समयोचित दिशाबोध प्रदान करने वाली लेखनी से भी जनमानस अछूता नहीं है जिन्होंने ''आदर्श शिष्या'' का अनुपमेय उदाहरण प्रस्तुत करते हुए गुरुआज्ञा से शताधिक ग्रंथों का लेखन कर जैनागम को अमूल्य कृतियाँ प्रदान की हैं। उसी क्रम में उनके द्वारा चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज की निष्कलंक परम्परा का परिज्ञान कराने वाली उनकी यह अनमोल कृति ''वर्तमान पट्टाचार्य श्री अभिनंदनसागर पूजा एवं परिचय'' है, जिसके द्वारा भव्यात्मा जीव उन पूज्य गुरुओं के आदर्शमयी जीवन एवं गुरुपरम्परा से परिचित हो सकेंगे।

परमपूज्य वर्तमान पट्टाचार्य श्री अभिनंदनसागर जी महाराज के 46वें मुनि दीक्षा दिवस के पावन अवसर पर वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला से प्रकाशित इस कृति के माध्यम से आप सभी सुधी पाठक गुरुभक्ति कर अपूर्व पुण्य का संचय करें, यही इस पुस्तक के प्रकाशन की सार्थकता है।

प्रस्तावना

–ब्र. कु. इन्दु जैन (संघस्थ)

''चारित्तं खलु धम्मो'' अर्थात् चारित्र ही धर्म है। आचार्यश्री कुन्दकुन्द स्वामी ने प्रवचनसार ग्रंथ में चारित्र का स्वरूप उल्लिखित करते हुए कहा है कि इस धर्म की जड़ सम्यग्दर्शन है अर्थात् उस धर्म को रत्नत्रय मार्ग द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है।

जैन जगत के आध्यात्मिक सूर्य, बीसवीं शताब्दी के प्रथमाचार्य चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज ने इस बीसवीं सदी में इन्हीं आगम वाक्यों को अंगीकार कर चारित्र मार्ग की सम्यक् प्रतिष्ठापना करते हुए मुनि परम्परा को जीवंत किया।

उन्हीं महान गुरुदेव की परम्परा में परम पूज्य आचार्यश्री वीरसागर महाराज, पूज्य आचार्यश्री शिवसागर जी महाराज, पूज्य आचार्यश्री धर्मसागर जी महाराज, पूज्य आचार्य श्री अजितसागर जी महाराज, पूज्य आचार्यश्री श्रेयांससागर जी महाराज ने क्रम से आचार्य पद पर प्रतिष्ठित होकर चारित्र की महिमा को जगप्रसिद्ध किया और इस अक्षुण्ण परम्परा को खूब वृद्धिंगत किया। उसी पट्ट परम्परा में षष्ठम पट्टाचार्य परमपूज्य आचार्यश्री अभिनंदनसागर जी महाराज अधिष्ठित हैं, जिन्होंने सन् 1992 में इस पद को अंगीकार किया और निरन्तर इस अक्षुण्ण परम्परा को वृद्धिंगत करने में सतत संलग्न हैं। वस्तुतः धर्म के सजीव प्रतीक एवं मुक्तिपथ के पथिक वे परम स्तुत्य दिगम्बर साधु ही हैं, जो संसार भ्रमण में निमग्न जीवों के लिए प्रदीपस्तम्भवत् हैं।

उसी पवित्र परम्परा में बीसवीं शताब्दी में कुमारिकाओं के लिए त्याग का मार्ग प्रशस्त करने वाली, अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्व से सम्पूर्ण विश्व को आश्चर्यचकित करने वाली परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी हैं, जिन्होंने इस परम्परा का नाम विश्व के मानसपटल पर पहुँचाया है। पूज्य माताजी के शिष्यवर्ग में एक अलौकिक आदर्श उपस्थित करने वाली उनकी सुयोग्य शिष्या परमपूज्य प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी हैं, जिन्होंने गुरु के पदचिन्हों पर चलते हुए जैनागम को अपनी शताधिक अमूल्य कृतियाँ प्रदान की हैं, जिसमें से ये नूतन कृति भी स्वयं में अमूल्य है। वात्सल्य, प्रज्ञा, ओज, माधुर्य, गाम्भीर्य आदि अनेकानेक गुणों से समन्वित, श्रमण संस्कृति की उदीयमान नक्षत्र पूज्य माताजी की यह कृति अन्य कृतियों की भांति ही अपने उद्देश्य में सफल होकर गुरुभक्ति में सभी को दृढ़ करे, यही शुभेच्छा है।

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त-परिचय

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जन्मस्थान– टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.

जन्मतिथि– आसोज सुदी 15 (शरदपूर्णिमा) वि. सं. 1991, (22 अक्टूबर सन् 1934)

जाति– अग्रवाल दि. जैन, **गोत्र–** गोयल, **नाम–** कु. मैना

माता-पिता– श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जैन

आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत– ई. सन् 1952, बाराबंकी में शरदपूर्णिमा के दिन

क्षुल्लिका दीक्षा– चैत्र कृ. 1, ई. सन् 1953 को महावीरजी अतिशय क्षेत्र (राज.) में आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से। नाम-क्षुल्लिका वीरमती

आर्यिका दीक्षा– वैशाख कृ. 2, ई. सन् 1956 को माधोराजपुरा (राज.) में चारित्रचक्रवर्ती 108 आचार्य श्री शांतिसागर जी की परम्परा के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से।

साहित्यिक कृतित्व– अष्टसहस्री, समयसार, नियमसार, मूलाचार, कातंत्र-व्याकरण, षट्खण्डागम आदि ग्रंथों के अनुवाद/टीकाएं एवं लगभग 300 ग्रंथों की लेखिका।

डी.लिट्. की मानद उपाधि– सन् 1995 में अवध वि.वि. (फैजाबाद) द्वारा एवं तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद द्वारा 8 अप्रैल 2012 को ''डी.लिट्.'' की मानद उपाधि से विभूषित।

तीर्थ निर्माण प्रेरणा– हस्तिनापुर में जंबूद्वीप, तेरहद्वीप, तीनलोक आदि रचनाओं के निर्माण, शाश्वत तीर्थ अयोध्या का विकास एवं जीर्णोद्धार, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का निर्माण, तीर्थंकर जन्मभूमियों का विकास यथा-भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में 'नंद्यावर्त महल' नामक तीर्थ निर्माण, भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकन्दी तीर्थ (निकट गोरखपुर-उ.प्र.) का विकास, भगवान पार्श्वनाथ केवलज्ञानभूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर तीस चौबीसी मंदिर, हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर भगवान शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा, मांगीतुंगी में निर्माणाधीन 108 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमा, महावीर जी तीर्थ पर महावीर धाम में पंचबालयति मंदिर, शिर्डी में ज्ञानतीर्थ, सम्मेदशिखर में आचार्य श्री शांतिसागर धाम इत्यादि।

महोत्सव प्रेरणा– पंचवर्षीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव, भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव, अयोध्या में भगवान ऋषभदेव महाकुंभ मस्तकाभिषेक, कुण्डलपुर महोत्सव, भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव, दिल्ली में कल्पद्रुम महामण्डल विधान का ऐतिहासिक आयोजन इत्यादि। विशेषरूप से 21 दिसम्बर 2008 को जम्बूद्वीप स्थल पर विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसका उद्घाटन भारत की तत्कालीन राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील द्वारा किया गया।

शैक्षणिक प्रेरणा– 'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान' पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन, इतिहासकार सम्मेलन, न्यायाधीश सम्मेलन एवं अन्य अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सेमिनार, ऑनलाइन जैन इनसाइक्लोपीडिया आदि।

रथ प्रवर्तन प्रेरणा– जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति (1982 से 1985), समवसरण श्रीविहार (1998 से 2002), महावीर ज्योति (2003-2004) का भारत भ्रमण।

इस प्रकार नित्य नूतन भावनाओं की जननी पूज्य माताजी चिरकाल तक इस वसुधा को सुशोभित करती रहें, यही मंगल कामना है।

पूज्य प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका

श्री चन्दनामती माताजी का संक्षिप्त परिचय

-ब्र. कु. बीना जैन (संघस्थ)

नाम– प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी

दीक्षा पूर्व नाम– ब्र. कु. माधुरी शास्त्री

जन्मतिथि– 18-5-1958 (ज्येष्ठ कृष्णा अमावस्या)

जन्मस्थान– टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.

माता-पिता– श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जी जैन

भाई– चार (कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी, कैलाशचंद, स्वप्रकाशचंद, सुभाषचंद)

बहन– आठ (गणिनी आर्यिका शिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी एवं आर्यिका श्री अभयमती माताजी सहित)

ब्रह्मचर्य व्रत– 25 अक्टूबर 1969 को जयपुर में 2 वर्ष का ब्रह्मचर्य व्रत एवं सन् 1971, अजमेर में आजन्म ब्रह्मचर्य सुगंधदशमी को गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी से।

धार्मिक अध्ययन– 1972 में सोलापुर से ''शास्त्री'' की उपाधि, 1973 में ''विद्यावाचस्पति'' की उपाधि।

द्वितीय एवं सप्तम प्रतिमा के व्रत– सन् 1981 एवं 1987 में गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी से।

आर्यिका दीक्षा– हस्तिनापुर में 13-8-1989, श्रावण शु. 11 को गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी से।

प्रज्ञाश्रमणी की उपाधि– 1997 में चौबीस कल्पद्रुम महामण्डल विधान के पश्चात् राजधानी दिल्ली में पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा।

पीएच.डी. की मानद उपाधि– तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद द्वारा 8 अप्रैल 2012 को विश्वविद्यालय में।

साहित्यिक योगदान– चारित्रचन्द्रिका, तीर्थंकर जन्मभूमि विधान, नवग्रहशांति विधान, भक्तामर विधान, समयसार विधान आदि 150 से अधिक पुस्तकों का लेखन, वर्तमान में पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा ''षट्खण्डागम (प्राचीनतम जैन सूत्र ग्रंथ) एवं ''भगवान ऋषभदेव चरितम्'' की संस्कृत टीकाओं का हिन्दी अनुवाद कार्य, 'समयसार' एवं 'कुन्दकुन्दमणिमाला' का हिन्दी पद्यानुवाद, भगवान महावीर स्तोत्र की संस्कृत एवं हिन्दी टीका, भगवान महावीर हिन्दी-अंग्रेजी शब्दकोष, जैन वर्शिप (अंग्रेजी में पूजा, भजन, बारहभावना आदि), भजन (लगभग 1000), पूजन, चालीसा, स्तोत्र इत्यादि लेखन की अद्भुत क्षमता, हिन्दी भाषा के साथ-साथ अंग्रेजी, संस्कृत आदि भाषाओं की सिद्धहस्त लेखिका, गणिनी ज्ञानमती गौरव ग्रंथ एवं भगवान पार्श्वनाथ तृतीय सहस्राब्दि ग्रंथ की प्रधान सम्पादिका। वर्तमान में 'इन्साइक्लोपेडिया ऑफ जैनिज्म डॉट कॉम' (ऑनलाईन जैन विश्वकोश) के सम्पादन में संलग्न।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के शिरोमणि संरक्षक

1. श्रीमती निर्मला जैन ध.प. स्व. श्री प्रेमचन्द्र जैन, तत्पुत्र प्रदीप कुमार जैन, रोहतक, दिल्ली-6।
2. श्रीमती सुमन जैन ध.प. श्री दिग्विजय सिंह जैन, इंदौर।
3. श्री महावीर प्रसाद जैन संघपति, जी-19, साऊथ एक्सटेन्शन, नई दिल्ली।
4. श्री महेन्द्र पाल हरेन्द्र कुमार जैन, सूरजमल विहार, दिल्ली।
5. श्रीमती मोहनी जैन ध.प. श्री सुनील जैन, प्रीत विहार, दिल्ली।
6. श्री देवेन्द्र कुमार जैन (धारूहेड़ा वाले) गुड़गाँव (हरि.)।
7. श्रीमती शारदा रानी जैन ध.प. स्व. रिखबचंद जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-92।
8. डॉ. देवेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)
9. श्रीमती संगीता जैन ध.प. श्री संजीव कुमार जैन, शेरकोट (बिजनौर) उ.प्र.
10. श्री अनिल कुमार जैन, दरियागंज, दिल्ली
11. श्री बी.डी. मदनाइक, मुम्बई
12. श्री धनकुमार जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-92।
13. श्री जितेन्द्र कुमार जैन एवं श्रीमती सुनीता जैन कोटड़िया, फ्लोरिडा, यू.एस.ए.
14. श्रीमती विमला देवी जैन ध.प. श्री ओमप्रकाश जैन, स्वालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।
15. श्री अमित जैन एवं संभव जैन सुपुत्र श्रीमती अनीता जैन ध.प. श्री मूलचंद जैन पाटनी, दिसपुर (कामरूप) आसाम।
16. श्रीमती अजित कुमारी जैन ध.प. श्री महेन्द्र कुमार जैन, ओबेदुल्लागंज (रायसेन) म.प्र.।
17. श्री नाभिकुमार जैन, जैन बुक डिपो, सी-4, पी.वी.आर. प्लाजा के पीछे, कॉनॉट प्लेस, नई दिल्ली।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के परम संरक्षक

1. श्री माँगीलाल बाबूलाल पहाड़े, हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश)।
2. डॉ. प्रकाशचन्द्र जैन, 792 विवेकानंदपुरी, सिविल लाइन, सीतापुर (उ.प्र.)।
3. श्री सुमत प्रकाश जैन, गज्जू कटरा, शाहदरा, दिल्ली।
4. श्री सुनील कुमार जैन, द्वारा-सुनील टैक्सटाईल्स, सरधना (मेरठ) उ.प्र.।
5. स्व. श्री प्रकाश चंद अमोलक चंद जैन सर्राफ, सनावद (म.प्र.)।
6. श्री प्रद्युम्न कुमार जवेरी, रोकड़ियालेन, बोरीवली (वेस्ट) मुंबई।
7. श्रीमती उर्मिला देवी ध.प. श्री कान्ती प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
8. श्रीमती उषा जैन ध.प. श्री विमल प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
9. श्री आनन्द प्रकाश जैन (सौरम वाले) , गांधीनगर, दिल्ली।
10. श्रीमती सरिता जैन ध.प. श्री राजकुमार जैन, किदवई नगर, कानपुर।
11. स्व. श्रीमती कैलाशवती ध.प. श्री कैलाश चन्द्र जैन , तोपखाना बाजार, मेरठ।
12. श्री भानेन्द्र कुमार जैन, द्वारा-श्री विद्या जैन, भगत सिंह मार्ग, जयपुर।
13. श्री प्रदीप कुमार शान्तिलाल बिलाला, अनूपनगर, इंदौर, (म.प्र.)।
14. श्री सुरेशचंद पवन कुमार जैन, बाराबंकी (उ.प्र.)।
15. श्री नथमल पारसमल जैन, कलकत्ता-7।
16. श्रीमती स्व. शांताबाई ध.प. श्री कमलचंद जैन, सनावद (म.प्र.)।
17. श्री रूपचंद जैन कटारिया, दिल्ली
18. श्री आशु जैन, कालका जी, नई दिल्ली
19. श्री प्रद्युम्न कुमार जैन छोटी सा., श्री अमरचंद जैन सर्राफ, लखनऊ (उ.प्र.)
20. श्रीमती शशि जैन ध.प. श्री दिनेशचंद जैन, शिवालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।
21. श्रीमती आदर्श जैन ध.प. स्व. श्री अनन्तवीर्य जैन के सुपुत्र श्री मनोज कुमार जैन, मेरठ।
22. श्रीमती आरती जैन ध.प. श्री प्रकाशचंद जैन 'शीशे वाले', इलाहाबाद (उ.प्र.)।

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान-संक्षिप्त परिचय

-कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान की स्थापना पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमतीमाताजी की प्रेरणा से सन् 1972 में राजधानी दिल्ली में हुई थी। संस्थान का मुख्य कार्यालय सन् 1974से हस्तिनापुर में प्रारंभ हुआ। इस संस्थान के अन्तर्गत अनेक गतिविधियाँ हस्तिनापुर में तथा अन्यत्र चल रही हैं-

1. सन् 1972 से वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला के अन्तर्गत प्रतिवर्ष लाखों ग्रंथ प्रकाशित हो रहे हैं।

2. सन् 1974 से इस संस्थान के मुखपत्र के रूप में 'सम्यग्ज्ञान' हिन्दी मासिक पत्रिका का निरंतर प्रकाशन हो रहा है।

3. सन् 1974 से 1985 तक हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप रचना का निर्माण कार्य हुआ।

4. सन् 1974 से अब तक जम्बूद्वीप रचना के अतिरिक्त अनेक जिनमंदिरों का निर्माण हुआ है- कमल मंदिर, तीन मूर्ति मंदिर, ध्यान मंदिर, शांतिनाथ मंदिर, वासुपूज्य मंदिर, ॐ मंदिर, सहस्रकूट मंदिर, विद्यमान बीस तीर्थंकर मंदिर, आदिनाथ मंदिर, अष्टापद मंदिर, ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ, स्वर्णिम तेरहद्वीप रचना, तीन लोक रचना, नवग्रहशांति जिनमंदिर, चौबीस तीर्थंकर मंदिर एवं श्री शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग प्रतिमाओं की स्थापना ।

5. जम्बूद्वीप पुस्तकालय जिसमें लगभग 15000 ग्रंथ संग्रहीत हैं।

6. णमोकार महामंत्र बैंक जिसमें भक्तों द्वारा लिखकर भेजे गये करोड़ों णमोकार मंत्र जमा किये जाते हैं।

7. समय-समय पर शिक्षण-प्रशिक्षण शिविरों तथा संगोष्ठियों के आयोजन किये जाते हैं।

8. यात्रियों के शुद्ध भोजन के लिए राजा श्रेयांस भोजनालय का संचालन।

9. यात्रियों के ठहरने के लिए आधुनिक सुविधायुक्त डीलक्स फ्लैट्स वाली कई धर्मशालाओं तथा कोठियों एवं बंगलों का निर्माण किया गया है।

10. जम्बूद्वीप परिक्रमा के लिए नौका विहार, ऐरावत हाथी तथा मनोरंजन हेतु मिनी ट्रेन, झूले आदि हैं।

11. तीर्थंकर जन्मभूमियों की वंदना एवं धार्मिक फिल्मों का प्रदर्शन करने वाले थियेटर से समन्वित गणिनी ज्ञानमती हीरक जयंती एक्सप्रेस।

12. गणिनी ज्ञानमती दिगम्बर जैन पत्राचार परीक्षा केन्द्र का संचालन।

13. इंटरनेट पर जैनधर्म के इन्साइक्लोपीडिया (www.encyclopediaofjainism. com) का निर्माण।

दिल्ली, मेरठ, मुजफ्फरनगर, हरिद्वार, झाँसी, तिजारा आदि से जम्बूद्वीप स्थल तक आने के लिए दिन भर बसें मिलती रहती हैं।

दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान के अन्तर्गत भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार में भव्य नंद्यावर्त महल तीर्थ, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में निर्मित तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ तथा महावीर जी अतिशय क्षेत्र के महावीर धाम परिसर में निर्मित पंचबालयति दिगम्बर जैन मंदिर का संचालन होता है। वर्तमान में इस संस्थान के अन्तर्गत सम्मेदशिखर जीतीर्थ पर "आचार्य श्री शांतिसागर धाम" का निर्माण प्रारंभ किया जा रहा है।

जम्बूद्वीप एवं अन्य रचनाओं के दर्शन हेतु हस्तिनापुर पधारकर आध्यात्मिक एवं भौतिक सुख की प्राप्ति करें।

वर्तमान पट्टाचार्य
श्री अभिनंदनसागर जी महाराज पूजन

-स्थापना (दोहा)-

सदी बीसवीं के प्रथम, शान्तिसागराचार्य।
उनके पट पर शोभते, षष्ठम पट्टाचार्य।।1।।
अभिनन्दनसागर गुरू, है उनका शुभ नाम।
गुरु चरणों मे है मेरा, बारम्बार प्रणाम।।2।।
गुरुपूजन के हेतु मैं, करूँ यहाँ आह्वान।
स्थापनसन्निधिकरण, में है भाव प्रधान।।3।।

ॐ ह्रीं आचार्यश्रीअभिनंदनसागरमुनीन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं आचार्यश्रीअभिनंदनसागरमुनीन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं आचार्यश्रीअभिनंदनसागरमुनीन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

-अष्टक (शेर छंद)-

स्वर्णिम कलश से नीर की धारा करूँ पद में।
मन शांति हेतु नमन है आचार्य के पद में।।

आचार्य श्री अभिनंदनसागर की अर्चना।
मन को करे आनंदित गुरु पाद वंदना।।1।।

ॐ ह्रीं आचार्यश्रीअभिनन्दनसागरमुनीन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन मलयगिरी का ले चर्चूं गुरूपद में।
तन मन बने शीतल नमूँ आचार्य के पद में।।
आचार्य श्री अभिनंदनसागर की अर्चना।
मन को करे आनंदित गुरु पाद वंदना।।2।।

ॐ ह्रीं आचार्यश्रीअभिनन्दनसागरमुनीन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मोती समान अक्षत के पुंज धरूँ मैं।
अक्षय सुखों की प्राप्ति हेतु नमन करूँ मैं।।
आचार्य श्री अभिनंदनसागर की अर्चना।
मन को करे आनंदित गुरु पाद वंदना।।3।।

ॐ ह्रीं आचार्यश्रीअभिनन्दनसागरमुनीन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चंपा चमेली आदि पुष्प से करूँ पूजा।
आत्मीक सुख से भिन्न कोई सुख न है दूजा।।
आचार्य श्री अभिनंदनसागर की अर्चना।
मन को करे आनंदित गुरु पाद वंदना।।4।।

ॐ ह्रीं आचार्यश्रीअभिनन्दनसागरमुनीन्द्राय कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य थाल लेके गुरु की अर्चना करूँ।
क्षुधरोग नाश करके आत्मसौख्य को वरूँ।।
आचार्य श्री अभिनंदनसागर की अर्चना।
मन को करे आनंदित गुरु पाद वंदना।।5।।

ॐ ह्रीं आचार्यश्रीअभिनन्दनसागरमुनीन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत दीप जला पूजन में आरती करूँ।
हो मोहतिमिर नाश ज्ञानभारती भरूँ।।
आचार्य श्री अभिनंदनसागर की अर्चना।
मन को करे आनंदित गुरु पाद वंदना।।6।।

ॐ ह्रीं आचार्यश्रीअभिनन्दनसागरमुनीन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन कपूर की सुगंध धूप जलाऊँ।
पूजन में कर्मनाश हेतु धूप चढ़ाऊँ।।
आचार्य श्री अभिनंदनसागर की अर्चना।
मन को करे आनंदित गुरु पाद वंदना।।7।।

ॐ ह्रीं आचार्यश्रीअभिनन्दनसागरमुनीन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगूर आम्र आदि फल पूजन में चढ़ाऊँ।
शिवफल की प्राप्ति हेतु गुरु को शीश झुकाऊँ।।
आचार्य श्री अभिनंदनसागर की अर्चना।
मन को करे आनंदित गुरु पाद वंदना।।8।।

ॐ ह्रीं आचार्यश्रीअभिनन्दनसागरमुनीन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध आदि अष्ट द्रव्य अर्घ्य बनाया।
गुरु पद में 'चन्दनामती' भावों से चढ़ाया।।
आचार्य श्री अभिनंदनसागर की अर्चना।
मन को करे आनंदित गुरु पाद वंदना।।9।।

ॐ ह्रीं आचार्यश्रीअभिनन्दनसागरमुनीन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रयधारी गुरू, के पद में त्रयधार।
करके रत्नत्रय वरूँ, यह है शांतीधार।।10।।

शांतये शांतिधारा।

गुण पुष्पों युत गुरुचरण, भक्ति करूँ दिन रात।
पुष्पांजलि करके मुझे, हो जावें गुण प्राप्त।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

जयमाला

-शंभु छंद-

जिनशासन में शुभ देव शास्त्र गुरु परमपूज्य माने जाते।
इनकी भक्ती से सम्यक्दर्शन ज्ञान चरित हैं मिल जाते।।
उन रत्नत्रय को नमन करूँ आत्मा में इनको प्रगट करूँ।
रत्नत्रय में ही रम करके इक दिन मैं भी शिवसौख्य वरूँ।।1।।

आचार्य उपाध्याय साधु सभी इनका सदैव पालन करते।
अतएव वही क्रम से अरिहंत तथा सिद्धों का पद वरते।।
गुरुपूजन करके मैंने यह जयमाल का थाल सजाया है।
आचार्यप्रवर अभिनन्दनसागर पद में इसे चढ़ाया है।।2।।

शुभ नगर शेषपुर राजस्थान में जिला उदयपुर कहलाता।
श्रावक श्री अमरचन्द रूपाबाई परिवार वहाँ रहता।।
धनराज पुत्र को जन्म दिया रूपाबाई माँ धन्य हुई।
सन् उन्निस सौ ब्यालिस में प्रथम ज्येष्ठ कृष्णा पंचमि तिथि थी।।3।।

धार्मिक संस्कारों के कारण आजन्म ब्रह्मचारी बनकर।
क्षुल्लक ऐलक दीक्षा नन्तर मुनिदीक्षा प्राप्त किया सुखकर।।
सन् उन्निस सौ उनहत्तर में फाल्गुन शुक्ला अष्टमि के दिन।
गुरु धर्म सिन्धु से दीक्षा ले बन गये मुनिश्री अभिनंदन।।4।।

अट्ठाइस मूलगुणों में रत मुनिवर का नाम प्रसिद्ध हुआ।
परमेष्ठी उपाध्याय पद पर रहकर भी गौरव वृद्धि किया।।
फिर इक दिन गुरुवर के जीवन में ऐसी सुखद घड़ी आई।
षष्ठम आचार्य पदारोहण करके सब जनता हरषाई।।5।।

बीसवीं सदी के प्रथम सूरि की इस अक्षुण्ण शृँखला में।
अभिनन्दनसागर वर्तमान आचार्य संघ के नायक हैं।।

ये दीर्घकाल दीक्षित मुनिवर इन चरणों में शत वन्दन है।
आचार्यदेव की पूजन में जयमाला अर्घ्य समर्पण है।।6।।
गणिनी माताश्री ज्ञानमती जी की शिष्या चन्दनामती।
आचार्यदेव की पूजन रचकर चाहे हो मम शुद्ध मती।।
शांतीसागर से लेकर अब तक सब आचार्यों को वंदन।
संघस्थ सभी मुनिराजों के चरणों में भी शत बार नमन।।7।।

ॐ ह्रीं आचार्यश्रीअभिनन्दनसागरमुनीन्द्राय जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

अभिनन्दन आचार्य की, पूजन है सुखकार।
गुरुभक्ती संसार से, कर सकती है पार।।

।।इत्याशीर्वादः, पुष्पांजलिः।।

आचार्य श्री शांतिसागर परम्पराचार्य पूजन

(सात आचार्यों की सामूहिक पूजन)

-स्थापना-

बीसवीं सदी के प्रथमसूरि श्री शांतिसिंधु कहलाए हैं।
उनके ही पट्टाचार्य प्रथम श्री वीरसिन्धु कहलाए हैं।।
शिवसागर मुनिवर जी द्वितीय पट्टाधिपती आचार्य हुए।
श्री धर्मसिन्धु मुनि परम्परा के तृतीय पट्टाचार्य हुए।।1।।
श्री अजितसिन्धु श्रेयांससिन्धु चौथे-पंचम आचार्य हुए।
इन परम्पराचार्यों की पूजन करने के शुभ भाव हुए।।
आगे षष्ठम आचार्य पूज्य अभिनन्दनसागर गुरुवर हैं।
उनकी भी पूजन हेतु करूँ आह्वानन आदिक विधिवत् मैं।।2।।

दोहा-

गुरु भक्ति संसार में, सब सुख देन समर्थ।
गुरुपद की भी प्राप्ति हो, सिद्ध सभी हों अर्थ।।3।।

ॐ ह्रीं चारित्रचक्रवर्तिश्रीशांतिसागर-श्रीवीरसागर-श्रीशिवसागर-श्रीधर्मसागर-श्रीअजितसागर-श्रेयांससागर-श्रीअभिनंदनसागराचार्यपरमेष्ठिनः! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं चारित्रचक्रवर्तिश्रीशांतिसागर-श्रीवीरसागर-श्रीशिवसागर-श्रीधर्मसागर-श्रीअजितसागर-श्रेयांससागर-श्रीअभिनंदनसागराचार्यपरमेष्ठिनः! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं चारित्रचक्रवर्तिश्रीशांतिसागर-श्रीवीरसागर-श्रीशिवसागर-श्रीधर्मसागर-श्रीअजितसागर-श्रेयांससागर-श्रीअभिनंदनसागराचार्यपरमेष्ठिनः! अत्र मम सन्निहितो भवत भवत वषट् सन्निधीकरणं।

अथ अष्टक (शंभु छंद)

गंगा का निर्मल जल लेकर गुरुओं के पद त्रयधार करूँ।
सच्चे गुरुओं के गुण में रमकर जन्म मरण का नाश करूँ।।

श्री शांति-वीर-शिव-धर्म-अजित-श्रेयांस सिंधु का अर्चन है।
अभिनन्दनसागर तक सातों आचार्यदेव को वंदन है।।1।।

ॐ ह्रीं चारित्रचक्रवर्तिश्रीशांतिसागर-श्रीवीरसागर-श्रीशिवसागर-श्रीधर्मसागर-श्रीअजितसागर-श्रीश्रेयांससागर-श्रीअभिनंदनसागरपर्यन्त-सप्तआचार्यपरमेष्ठिभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीरी केशर को घिसकर गुरु के पद में चर्चन कर लूँ।
गुरु के वैरागी गुण में रमकर भव आताप शमन कर लूँ।।
श्री शांति-वीर-शिव-धर्म-अजित-श्रेयांस सिंधु का अर्चन है।
अभिनन्दनसागर तक सातों आचार्यदेव को वंदन है।।2।।

ॐ ह्रीं चारित्रचक्रवर्तिश्रीशांतिसागर-श्रीवीरसागर-श्रीशिवसागर-श्रीधर्मसागर-श्रीअजितसागर-श्रीश्रेयांससागर-श्रीअभिनंदनसागरपर्यन्त-सप्तआचार्यपरमेष्ठिभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदन निर्वपामीति स्वाहा।

शाली तंदुल के तीन पुंज गुरुपद में अर्पण करना है।
उनके वैरागी प्रवचन सुनकर अक्षय पद को वरना है।।
श्री शांति-वीर-शिव-धर्म-अजित-श्रेयांस सिंधु का अर्चन है।
अभिनन्दनसागर तक सातों आचार्यदेव को वंदन है।।3।।

ॐ ह्रीं चारित्रचक्रवर्तिश्रीशांतिसागर-श्रीवीरसागर-श्रीशिवसागर-श्रीधर्मसागर-श्रीअजितसागर-श्रीश्रेयांससागर-श्रीअभिनंदनसागरपर्यन्त-सप्तआचार्यपरमेष्ठिभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

विषयों की आशा छोड़ मुनीजन रत्नत्रय में रमते हैं।
हम उनके पद में पुष्प चढ़ा विषयाशा को तज सकते हैं।।
श्री शांति-वीर-शिव-धर्म-अजित-श्रेयांस सिंधु का अर्चन है।
अभिनन्दनसागर तक सातों आचार्यदेव को वंदन है।।4।।

ॐ ह्रीं चारित्रचक्रवर्तिश्रीशांतिसागर-श्रीवीरसागर-श्रीशिवसागर-श्रीधर्मसागर-श्रीअजितसागर-श्रीश्रेयांससागर-श्रीअभिनंदनसागरपर्यन्त-सप्तआचार्यपरमेष्ठिभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

जो सरस व नीरस भोजन में नहिं राग द्वेष दरशाते हैं।
उन गुरुओं की पूजन में हम नैवेद्य चढ़ा हरषाते हैं।।
श्री शांति-वीर-शिव-धर्म-अजित-श्रेयांस सिंधु का अर्चन है।
अभिनन्दनसागर तक सातों आचार्यदेव को वंदन है।।5।।

ॐ ह्रीं चारित्रचक्रवर्तिश्रीशांतिसागर-श्रीवीरसागर-श्रीशिवसागर-श्रीधर्मसागर-श्रीअजितसागर-श्रीश्रेयांससागर-श्रीअभिनंदनसागरपर्यन्त-सप्तआचार्यपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सांसारिक जन का मोह त्याग कर जिनने मुनिपद अपनाया।
मुनियों की आरति कर हमने मोह नाश करना चाहा।।
श्री शांति-वीर-शिव-धर्म-अजित-श्रेयांस सिंधु का अर्चन है।
अभिनन्दनसागर तक सातों आचार्यदेव को वंदन है।।6।।

ॐ ह्रीं चारित्रचक्रवर्तिश्रीशांतिसागर-श्रीवीरसागर-श्रीशिवसागर-श्रीधर्मसागर-श्रीअजितसागर-श्रीश्रेयांससागर-श्रीअभिनंदनसागरपर्यन्त-सप्तआचार्यपरमेष्ठिभ्यः मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

निज कर्म जलाने हेतु मुनीजन घोर तपस्या करते हैं।
हम धूप जलाकर उन मुनियों के पद की पूजन करते हैं।।
श्री शांति-वीर-शिव-धर्म-अजित-श्रेयांस सिंधु का अर्चन है।
अभिनन्दनसागर तक सातों आचार्यदेव को वंदन है।।7।।

ॐ ह्रीं चारित्रचक्रवर्तिश्रीशांतिसागर-श्रीवीरसागर-श्रीशिवसागर-श्रीधर्मसागर-श्रीअजितसागर-श्रीश्रेयांससागर-श्रीअभिनंदनसागरपर्यन्त-सप्तआचार्यपरमेष्ठिभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

शिवफल की आशा से मुनिवर दुर्लभ दीक्षा धारण करते।
उनके पद में फल अर्पण कर हम अपना जन्म सफल कर लें।।
श्री शांति-वीर-शिव-धर्म-अजित-श्रेयांस सिंधु का अर्चन है।
अभिनन्दनसागर तक सातों आचार्यदेव को वंदन है।।8।।

ॐ ह्रीं चारित्रचक्रवर्तिश्रीशांतिसागर-श्रीवीरसागर-श्रीशिवसागर-श्रीधर्मसागर-श्रीअजितसागर-श्रीश्रेयांससागर-श्रीअभिनंदनसागरपर्यन्त-सप्तआचार्यपरमेष्ठिभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत पुष्प चरू दीपक व धूप फल ले करके।
''चन्दनामती'' सुख मिलता है गुरुपद में अर्घ्य चढ़ा करके।।
श्री शांति-वीर-शिव-धर्म-अजित-श्रेयांस सिंधु का अर्चन है।
अभिनन्दनसागर तक सातों आचार्यदेव को वंदन है।।9।।

ॐ ह्रीं चारित्रचक्रवर्तिश्रीशांतिसागर-श्रीवीरसागर-श्रीशिवसागर-श्रीधर्मसागर-श्रीअजितसागर-श्रीश्रेयांससागर-श्रीअभिनंदनसागरपर्यन्त-सप्तआचार्यपरमेष्ठिभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

-दोहा-

गुरु गुण की महिमा अगम, कहने की नहिं शक्ति।
शांतीधारा कर चरण, मांगूं बस गुरुभक्ति।।

शान्तये शांतिधारा।

सुरभित पुष्प अनेक ले, अर्पूं गुरुपदपद्म।
पुष्पांजलि करके मिले, निज आतम गुण सद्म।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य मंत्र – **ॐ ह्रीं श्रीशान्ति-वीर-शिव-धर्म-अजित-श्रेयांस-अभिनंदनसूरिभ्यो नमः।**

जयमाला

-शेर छंद-

जैवन्त हैं आचार्य शान्तिसिंधु जगत में।
जैवन्त हैं आचार्य वीरसिंधु जगत में।।
जैवन्त हैं शिवसिन्धु सूरि साधुजगत में।
जैवन्त धर्म सिन्धु हैं आचार्य जगत में।।1।।

जैवन्त अजित सिन्धु जी आचार्यप्रवर थे।
जैवन्त श्रीश्रेयांससिंधु सूरिप्रवर थे।।
जैवन्त वर्तमान के आचार्य प्रवर हैं।
कहते हैं अभिनन्दनसागरगुरू उन्हें।।2।।

इन सबकी कहानी हमें कुछ बोध देती है।
गुरुओं की निशानी ही सुख का स्रोत देती है।।
वे दीप के समान जलके देते उजाला।
वे पेड़ के समान सबको देते हैं छाया।।3।।

सदि बीसवीं के जो प्रथम आचार्य हुए हैं।
श्रीशान्तिसिंधु नाम से विख्यात हुए हैं।।
मुनिमार्ग का विकास उन्हीं गुरु से हुआ है।
पैंतिस बरस मुनिदीक्षा में व्यतीत किया है।।4।।

उन्नीस सौ पचपन में निजपद शिष्य को दिया।
मुनिवीर सिन्धु जी को पट्टाचार्य कह दिया।।
दो वर्ष तक आचार्य वीरसिंधु रहे थे।
उन्निस सौ सत्तावन में स्वर्ग चले गये थे।।5।।

मुनिराज श्री शिवसागर आचार्य बन गये।
चउसंघ के नायक वे सूत्रधार बन गये।।
उन्नीस सौ उन्हत्तर में स्वर्ग सिधारे।
तब धर्मसिन्धु जी बने आचार्य हमारे।।6।।

उन्नीस सौ सतासी तक संघ चलाया।
जिनधर्म ध्वज को दिग्दिगन्तव्यापी बनाया।।
उनकी हुई समाधि अजितसिन्धु बन गये।
बनकर चतुर्थ पट्टाचार्य गुण में रम गये।।7।।

उन्नीस सौ नब्बे में वे जग से चले गये।
श्रेयांससिंधु पंचम आचार्य बन गये।।
उन्नीस सौ बानवे में हुई उनकी समाधी।
श्रेयांससागर सूरि मुक्तिपंथ के रागी।।8।।

इन गुरु के बाद छट्ठे आचार्य बन गये।
आचार्य अभिनंदनसागर श्रमण हुए।।

चउसंघ के नायक हैं वे वात्सल्य के धनी।
जिनधर्म की प्रभावना करते हैं वे घनी।।9।।

यह शांतिसिंधु सूरि की परम्परा कही।
जयमाला अर्घ्य लेके पूजूँ पाऊँ शिवमही।।
गुरुपूजा करके ''चन्दनामति'' पूज्य पद मिले।
पूर्णार्घ्य चढ़ाऊँ मेरा आतम कमल खिले।।10।।

ॐ ह्रीं श्रीशांति-वीर-शिव-धर्म-अजित-श्रेयांस-अभिनंदनसूरिभ्यो जयमाला अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

शांतिसिंधु आचार्य से, अभिनंदन तक सात।
आचार्यों की मूल यह, परम्परा विख्यात।।1।।

।।इत्याशीर्वादः, पुष्पांजलिः।।

बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य श्री शांतिसागर परम्परा का पद्यमयी इतिहास

यह भारत वसुन्धरा ऋषियों की जन्मभूमि कहलाती है।
उनके ही पावन कृत्यों से यह कर्मभूमि कहलाती है।।
यहाँ धर्म की गंगा बहने से यह धर्मभूमि कहलाती है।
परकृत उपसर्ग सहन करने से धन्य भूमि कहलाती है।।1।।

यहाँ कितने ही कविराज हुए जो गुरु महिमा लिख चले गए।
क्या दौलत क्या भूधर, द्यानत को गुरु के दर्शन नहीं हुए।।
कब मिलहीं वे मुनिराज जिन्होंसे सरेंगे सगरे काज मेरे।
बस यही पंक्ति रटते रटते चल दिये काल के मुख में वे।।2।।

बीसवीं सदी का यह मार्मिक इतिहास सुना है गुरुओं से।
जब दक्षिण भारत में केवल दो एक मुनी ही रहते थे।।
उत्तर भारत में नाम लेश भी सुनने में कम आता था।
अतएव शास्त्र का पठन श्रवण भक्तों की प्यास बुझाता था।।3।।

इक शांतिसिंधु नामक मुनिवर देवेन्द्रकीर्ति के शिष्य हुए।
निज शुद्ध दिगम्बर चर्या से वे जग में बहुत प्रसिद्ध हुए।।
आजादी से त्रय युग पहले वे सप्तऋषी संग आए थे।
आचरणों का दुर्भिक्ष दूर करने वे दिल्ली आए थे।।4।।

सम्मेदशिखर जी सिद्धक्षेत्र यात्रा को मुनि संघ निकला था।
तब सारे उत्तर भारत में मुनि के अस्तित्व को खतरा था।।
पर दृढ़ता की उस मूरत ने सबके ही छक्के छुड़ा दिये।
अंग्रेजों ने भी शांतिसिंधु के सन्मुख मस्तक झुका लिए।।5।।

कहिं पर न विहार रुका उनका लन्दन से भी आज्ञा आई।
उस यथाजात मुद्राधारी ने कई फोटुएं खिंचवाई।।
इतिहास हमारे भारत का युग युग तक यह बतलाएगा।
ऋषि मुनियों का उत्कृष्ट त्याग मानवता को दर्शाएगा।।6।।

उत्तर भारत के जन-जन में कुछ ज्ञानज्योति प्रस्फुटित हुई।
जहाँ खान पान अविवेकपूर्ण वहिं कुछ विवेक की वृद्धि हुई।।
नेत्रों को धन्य किया अपने जीवन भी सफल किया जग ने।
मुनिदर्शन दुर्लभ को पाकर सौभाग्य सराहा था सबने।।7।।

जो चले गए बिन गुरुदर्शन उनकी आशा नहिं भर पाई।
पर हम सबकी प्यासी अँखियाँ मुनिवर का दर्शन कर पाईं।।
इक सदी बीसवीं के पहले आचार्य बने शांतिसागर।
इनसे आगे का स्रोत बहा ये चारितचक्री रत्नाकर।।8।।

मुनिपरम्परा के संग में ही नारी दीक्षा प्रारंभ हुई।
थीं चन्द्रमती आर्यिका बनीं गुरुवर की शिष्या प्रथम हुई।।
क्षुल्लिका अजितमति ने गुरुवर का वरदहस्त भी प्राप्त किया।
क्षुल्लक समन्तभद्र ने दीक्षा लेकर निज उत्थान किया।।9।।

इस तरह शताब्दी में चउविध संघ का क्रम गुरु ने चला दिया।
मानव की हृदय कलुषता को गुरु उपदेशों ने गला दिया।।
दीक्षाओं की शृँखला चली मुनिमारग आज प्रशस्त हुआ।
अस्वस्थ असंयत जीवन भी इनकी चर्या से स्वस्थ हुआ।।10।।

छत्तीस वर्ष तक शांतिसिंधु ने चतुर्मुखी सुविकास किया।
व्रतसंयम का चरमोत्कर्ष जब दस हजार उपवास किया।।
जिनवाणी सेवा में महान सिद्धान्त ग्रन्थ उद्धार किया।
चारित्रचक्रवर्ती कहकर जनता ने गुरु सत्कार किया।।11।।

यह पद केवल औपाधिक था तुमको उससे क्या नाता था।
तब ही तुम जैसी काया पर सर्पों ने झुकाया माथा था।।
कोन्नूर गुफा में बहुत देर तक सर्प गले में लिपट गया।
खुद को ही पावन करने को मानो वह तुमसे चिपट गया।।12।।

ऐसे कितने ही अतिशय जो तुमने जीवन में प्राप्त किए।
कलियुग में भी सतयुग जैसे गुरुदेव जगत को प्राप्त हुए।।

जितना काया से बन पाया उतना उससे श्रम साध लिया।
फिर जा कुंथलगिरि पर्वत पर आहार आदि भी त्याग दिया।।13।।

उन्निस सौ पचपन इसवी सन् चल रही समाधी गुरुवर की।
बारहवर्षीय तपस्या की अन्तिम तिथि आई मुनिवर की।।
आचार्यपट्ट निज त्याग दिया श्रीवीरसिंधु को कहलाया।
हो आज से तुम आचार्य चतुर्विध संघ ने उनको लिखवाया।।14।।

नूतन पिच्छी दे सूरजमल ब्रह्मचारी जयपुर भेज दिया।
आज्ञा कर ली स्वीकार शिष्य ने यह वापस संदेश दिया।।
गुरुदेव पूर्ण वैरागी की आत्मा आत्मा में लीन हुई।
भादों सुदि दूज पुण्यतिथि में आत्मा शरीर से भिन्न हुई।।15।।

लाखों नर नारी ने देखा मुनिवर का शौर्य पराक्रम भी।
नहिं कोई नेत्र बचे जिससे आंसू का झरना बहा नहीं।।
अब तो गुरु के आदेशों का पालन जीवन में शेष रहा।
अब जनसमूह आचार्य वीरसागर में उनको देख रहा।।16।।

श्री ज्ञानमती माताजी जब क्षुल्लिका अवस्था में ही थीं।
गुरुवर के दर्शन करने को कुंथलगिरि पर वे पहुँची थीं।।
क्षुल्लिका विशालमती के संग जा गुरु के चरण प्रणाम किया।
परिचय संक्षिप्त पूछ गुरु ने मुनि वीरसिंधु का नाम लिया।।17।।

आचार्यश्री के हाथों से ही दीक्षा की शुभ इच्छा थी।
पर गुरु ने अपना त्याग बता उनको छोटी सी शिक्षा दी।।
उत्तर की अम्मा कहकर लघुवय लखकर गुरु संतुष्ट हुए।
तुम वीरसिंधु से दीक्षा लेना यह कह आशिर्वचन दिये।।18।।

जयपुर में ही शुभ तिथि मुहूर्त में प्रथम पट्ट अभिषेक हुआ।
मुनि वीरसिंधु ने उदासीन मन से गुरुपद स्वीकार किया।।
आचार्य वीरसागर जी की जयकारों से नभ गूँज उठा।
उस युग का था यह प्रथम चतुर्विध संघ न कोई दूजा था।।19।।

आचार्य वीरसागर मुनिवर मितभाषी ज्येष्ठचरित्री थे।
स्वाध्यायशील गंभीरमना दृढ़ता की एक प्रशस्ती थे।।
शिष्यों के संग में पिता सदृश रहकर वात्सल्य लुटाते थे।
सर्वांग योग्य शिक्षाओं से शिष्यों को योग्य बनाते थे।।20।।

शिष्यों की इसी शृँखला में क्वांरी कन्या का क्रम आया।
पहली कुमारिका बनी आर्यिका ज्ञानमती जग ने पाया।।
लगभग दो वर्षों तक उस राजस्थान प्रान्त में भ्रमण किया।
शारीरिक अशक्तावश फिर गुरुवर ने जयपुर गमन किया।।21।।

खानिया क्षेत्र श्री वीरसिंधु का कर्मक्षेत्र बन आया था।
आश्विन मावस को जहाँ उन्होंने मरण समाधि बनाया था।।
सन् सत्तावन की काली मावस उन्हें उजाली बना गई।
साधक की साध्य साधना को मानो सिद्धी ही दिला गई।।22।।

अब संघ चतुर्विध के समक्ष नायक का प्रश्न उभर आया।
फिर संघ चतुर्विध ने मिलकर शिवसागर जी को अपनाया।।
थे बड़े तपस्वी ज्येष्ठ शिष्य आगम के दृढ़ श्रद्धानी थे।
निज गुरु का मान बढ़ाने में शिवसागर मुनिवर नामी थे।।23।।

आचार्य बने वात्सल्य दिया संघ एकसूत्र में बंधा रहा।
साधू साध्वी बनने का क्रम कुछ परम्परा से और बढ़ा।।
चालीस साधुओं के विशाल संघ का जग में इतिहास रहा।
मेवाड़ व राजस्थान तथा गुजरात में संघ प्रवास रहा।।24।।

श्री वीरसिंधु के बाद संघ गिरनार क्षेत्र की ओर चला।
ज्ञानी वरिष्ठ मुनि तथा आर्यिकाओं से गुरु सम्मान बढ़ा।।
इस यात्रा के पश्चात् पुनः वे राजस्थान पधारे थे।
भक्तों की भक्ती से हर्षित भी नभ के चाँद सितारे थे।।25।।

जिस राजस्थान मरुस्थल में हरियाली कहीं न दिखती है।
वहाँ देव शास्त्र गुरु भक्ती की हरियाली सबमें दिखती है।।

बस इसीलिए मुनिसंघों का सान्निध्य अधिक वहाँ मिलता है।
अधिकाधिक पुण्यार्जन करने वालों का भाग्य निखरता है।।26।।

आचार्य संघ के सभी साधु संयम के कट्टर साधक थे।
निज ज्ञान साधना में तत्पर सचमुच शिवपथ आराधक थे।।
जीवन की सुख दुख घड़ियों में, दश वर्ष समय भी निकल गया।
आचार्य संघ श्री महावीरजी तीर्थक्षेत्र पर पहुँच गया।।27।।

श्री शांतीवीरनगर में शांतीनाथ प्रतिष्ठा अवसर था।
दो गुरुओं के संस्मरण चिन्ह से युक्त नवोदित तीरथ था।।
फाल्गुन शुक्ला में पंचकल्याणक उत्सव होने वाला था।
ग्यारह दीक्षा का एक साथ दीक्षोत्सव होने वाला था।।28।।

श्री शिवसागर जी की प्रसन्नता अंग अंग से फूट रही।
अपनी बगिया में वृद्धि सोच अन्तर की कलियाँ फूट रहीं।।
क्या मालुम था उन कलियों को खुद गुरुवर खिला न पाएंगे।
अपनी खुशियों में रमकर वे अपने ही संग ले जाएंगे।।29।।

ज्वर का प्रकोप कुछ बढ़ा देह में सहज क्षीणता आई थी।
पर उनके तप के नहिं समक्ष ऐसी प्रतीति हो पाई थी।।
ज्वर का होगा शायद निमित्त या काल स्वयं ही आया था।
फाल्गुनी अमावस दिवस पूज्यवर का अंतिम दिन आया था।।30।।

चल दिये चतुर्विध संघ छोड़ नवकार मंत्र सुनते-सुनते।
महावीर प्रभू के चरणों की पावन रज मस्तक पर धरके।।
लेकिन इस अघटित घटना को नहिं साधु सहन कर पाए थे।
थे कौन नेत्र जिनने आँसू के झरने नहीं बहाए थे।।31।।

यूँ तो सब विज्ञ जानते थे सबको इस जग से जाना है।
अपना शरीर जब नहिं अपना तब किसका कौन ठिकाना है।।
लेकिन ऐसे मार्मिक प्रसंग में ज्ञानी भी हिल जाता है।
यह धर्मप्रेम तो रागी मुनिराजों में भी आ जाता है।।32।।

उन्निस सौ उनहत्तर सन् का वह कैसा अशुभ दिवस आया।
जब सभी साधुओं के ऊपर से उठा पिता जैसा साया।।
उस परम कारुणिक अवसर के क्षण नहीं लेखनी लिख सकती।
गंभीर नदी भी रोई उस क्षण रोई महावीर धरती।।33।।

पर जाने वाला चला गया वह वापस नहिं आ सकता है।
संयोग वियोग रहित पदवी वैरागी ही पा सकता है।।
कुछ समय चला कुछ धैर्य बंधा आगे का निर्णय शेष बचा।
किसको आचार्य बनाना है सारे संघ में यह शोर मचा।।34।।

कुछ दिन से अलग धर्मसागर मुनिवर भी यहाँ मिले आकर।
चउविध संघ को निर्णय लेना था कौन बने आचार्यप्रवर।।
बहुतेक विचार विमर्शों में बस साधु संघ एकत्र हुआ।
श्रीधर्मसिंधु श्रुतसागर दो नामों पर बहुत विमर्श हुआ।।35।।

विद्वत्ता में श्रुतसागर जी का नाम लिया कुछ मुनियों ने।
लेकिन दीक्षा में ज्येष्ठ धर्मसागर जी थे सब मुनियों में।।
अतएव उन्हीं का तृतीय पट्ट आचार्य किया निर्णय सबने।
हो गया पट्ट अभिषेक वहीं चउसंघ के वे आचार्य बने।।36।।

कुछ पुण्य विशेष रहा उनका सर्वाधिक दीक्षा दे डालीं।
श्री धर्मसिंधु ने धर्मक्षेत्र में विस्तृत उन्नति कर डाली।।
पच्चीस सौंवे निर्वाण महोत्सव पर दिल्ली संघ आया था।
आचार्यश्री का प्रमुख मार्गदर्शन जन-जन को भाया था।।37।।

चारों प्रकार के जैनों का सम्मेलन इस उत्सव में था।
राष्ट्रीय महोत्सव का व्यापक रूपक भी इस उत्सव में था।।
तब से ही दिल्लीवासी भी आचार्यश्री को जान गए।
इस पावन परम्परा की कट्टरता को भी पहचान गए।।38।।

उत्तरप्रदेश पश्चिमी क्षेत्र का बच्चा-बच्चा कहता है।
ऐसा निस्पृह आचार्य नहीं जग में कोई मिल सकता है।।

इस क्षेत्र में भी उनके अनेक शहरों में संघ विहार हुए।
वे चार वर्ष पश्चात् पुनः मरुभूमि तरफ ही चले गये।।39।।

अट्ठारह वर्षों तक शिष्यों के संवर्द्धन का कार्य किया।
इस मध्य पूज्य श्रुतसागर जी ने पुनः संघ स्वीकार किया।।
मुनिराज अजितसागर जी का लघु संघ अलग ही रहता था
शिष्यों के पठन व पाठन में ही तृप्त सदा वह रहता था।।40।।

उन्नीस शतक बहत्तर सन् में ज्ञानमती माताजी भी।
अपना आर्यिका संघ लेकर पैदल दिल्ली की ओर चलीं।।
निर्वाणोत्सव के बाद हस्तिनापुर की तरफ विहार हुआ।
उनके इस पद विहार से इक प्राचीन तीर्थ उद्धार हुआ।।41।।

श्री धर्मसिंधु भी संघ सहित आए इस पावन तीरथ पर।
महावीर प्रभू को सूरिमंत्र दे गए जो आज कमल मंदिर।।
यहाँ निर्मित जम्बूद्वीप रचना है ज्ञानमती की अमरकृती।
यह एक मिशाल जगत में है नारी आदर्शों की स्मृति।।42।।

सन् उन्निस सौ सत्तासी था सीकर में संघ विराज रहा।
आचार्य धर्मसागर जी का अंतिम समाधि का काल वहाँ।।
अपने शिष्यों के मध्य उन्होंने विधिवत् मरण समाधि किया।
प्रभु नाम मंत्र जपते-जपते गुरु वीरसिंधु का नाम लिया।।43।।

वैशाख बदी नवमी का दिन जब गुरुवर सबको छोड़ चले।
अपने आदर्शों की इस जग में अमिट छाप वे छोड़ चले।।
यह दीर्घ काल भी निकल गया मानों कुछ चंद समय बनकर।
फिर से जिम्मेदारी आई आचार्य बनाने की संघ पर।।44।।

पहले तो सभी साधुओं ने श्रुतसागर जी से विनय किया।
लेकिन निज नियमबद्धता से उनने न उसे स्वीकार किया।।
फिर वरिष्ठता की श्रेणी में श्री अजितसिंधु का क्रम आया।
तब शहर उदयपुर में चतुर्थ आचार्यपट्ट उनने पाया।।45।।

चउविध संघ का संचालन कर वे तो अपने में समा गए।
उन्निस सौ नब्बे की वैशाख पूर्णिमा को वे चले गए।।
सन् उन्निस सौ नब्बे को था दस जून ज्येष्ठ वदि में आया।
श्रेयांससिंधु मुनि ने पंचम आचार्य पट्ट तब था पाया।।46।।

चौबीस जून सन् नब्बे में ही एक और आचार्य बने।
मुनि वर्धमानसागर द्वितीय थे पंचम पट्टाचार्य बने।।
सन् उन्निस सौ नब्बे से दो आचार्यों की यह परम्परा।
चल गई शांतिसागर जी का उपवन दोनों से हरा-भरा।।47।।

श्रेयांससिंधु ने संघ सहित दक्षिण की ओर विहार किया।
वात्सल्यमूर्ति आचार्यप्रवर ने धर्म का खूब प्रचार किया।।
दो वर्ष अभी नहिं पूर्ण हुए थे कालचक्र ने वार किया।
दो तीन दिनों की बीमारी ने उन पर कड़ा प्रहार किया।।48।।

था नगर बांसवाड़ा जहाँ पर उनकी समाधि का दिन आया।
फाल्गुन वदि एकम् दिवस संघ के लिए वियोगी क्षण आया।।
वे अपनी दृढ़ता का प्रतीक अपने पीछे बस छोड़ गए।
कितनों के बोझिल मन को वे अपनी ममता से तोड़ गये।।49।।

प्राणी अपने लघु जीवन में कितने ही स्वांग रचाता है।
पर कालचक्र के आने पर सब स्वांग रचा रह जाता है।।
केवल उसका शुभ अशुभ कर्म ही उसके संग में आता है।
बाकी सारा ताना बाना बस यहीं पड़ा रह जाता है।।50।।

फिर से विमर्श प्रारंभ हुआ षष्ठम आचार्य किसे मानें।
संघस्थ साधुओं के हार्दिक भावों को कैसे पहचानें।।
अब वरिष्ठता की श्रेणी में श्री अभिनंदनसागर मुनि हैं।
बस इसीलिए षष्ठम आचार्यपट्ट के वे ही लायक हैं।।51।।

यह निर्णय संघ साधुओं का शीघ्रातिशीघ्र सम्पन्न हुआ।
खान्दूकालोनी में जनता के मध्य कार्य सम्पन्न हुआ।।

तब संघ चतुर्विध ने उनको ही घोषित पट्टाचार्य किया।
सब जनसमूह ने भक्तिभाव से गुरु का जयजयकार किया।।52।।

तिथि फाल्गुन सुदी चतुर्थी का सन् उन्निस सौ बानवे वर्ष।
था आठ मार्च रविवार चतुर्विध संघ में छाया परम हर्ष।।
षष्ठम आचार्य पट्ट पद पर हो गए प्रतिष्ठापित मुनिवर।
श्री शांतिसिंधु की परम्परा में निष्कलंक आचार्यप्रवर।।53।।

जयशील रहो आचार्यप्रवर यह परम्परा जयशील रहे।
कलिकाल प्रभावों से विमुक्त दृढ़ता का शुद्ध प्रतीक रहे।।
अन्तिम मुनि वीरांगज तक यह मुनि परम्परा ही जाएगी।
"चन्दनामती" यह श्रद्धा ही युग-युग तक ज्योति जलाएगी।।54।।

चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज की मूल परम्परा के वर्तमान पट्टाचार्य

आचार्य श्री अभिनंदनसागर जी महाराज की संक्षिप्त जीवन गाथा

प्रस्तुति -जीवन प्रकाश जैन

बचपन

जन्म-

आचार्यश्री अभिनंदनसागर जी महाराज का व्यक्तित्व अत्यन्त सामान्य, उदार, भोला होने के साथ ही चर्या के प्रति दृढ़ता, सिद्धान्तों के प्रति निर्भीकता और धर्म के प्रति अहर्निश समर्पण से भरा-पूरा है। ऐसे आचार्य महाराज का जन्म राजस्थान प्रान्त में उदयपुर जिले के पूर्व में सलुम्बर तहसील से ईशान दिशा में 13 किमी. दूर **''शेषपुर''** नाम के गाँव में प्रथम ज्येष्ठ वदी पंचमी, दिन-मंगलवार, संवत् 1999 को हुआ। तदनुसार **5 मई 1942** को आचार्य महाराज का **जन्म** माँ श्रीमती रूपाबाई और पिता श्री अमरचंद जी के आंगन में हुआ। तभी अपार हर्ष-आनंद की अनुभूतिपूर्वक माता-पिता ने नवजात बालक की उज्ज्वलता को देखते हुए उसका नाम **''धनराज''** रखा।

संस्कार-

प्रारंभ से ही धनराज को माँ अपने साथ जिनेन्द्र भगवान के दर्शन हेतु मंदिर ले जाती थीं और बचपन से ही कभी भी धनराज ने अपनी माँ को किसी भी धार्मिक क्रिया में बाधा उत्पन्न नहीं करके अपितु हर्षपूर्वक उस माँ का सहयोग ही किया। अर्थात् बचपन से ही धनराज के जीवन में धर्म के संस्कारों ने महत्वपूर्ण स्थान लिया और धनराज की अभिरुचि भी स्वतः ही धर्म के प्रति निष्ठावान बनती गई।

पाठशाला में धर्म अध्ययन-

इसी श्रृँखला में धनराज जब मात्र 6 वर्ष के थे, तभी अपनी बाल सखा वेणीचंद्र, बृजलाल आदि के साथ 3 किमी. दूर ''झल्लारा'' में पैदल ही जैन

पाठशाला जाते थे, जहाँ केशरिया जी वाले मोतीलाल जी मार्तण्ड एवं कुरावड़ के मोहनलाल जी पालीवाल सभी शिष्यों को अध्यापन कराते थे। धनराज ने भी 2 वर्ष तक झल्लारा में जैनधर्म का अध्ययन किया। पश्चात् आपकी विशेष अभिरुचि देखकर शेषपुर समाज ने भी अपने गाँव में पाठशाला का शुभारंभ कर दिया और सेमारी वाले पं. उदयलाल जी भोजल को अध्यापन के लिए आमंत्रित करके गाँव में सभी बच्चों को स्वाध्याय के साथ ही सांस्कृतिक कार्यक्रमों आदि के माध्यम से संस्कारित करने का महत्वपूर्ण उपक्रम किया। इसी का परिणाम रहा कि एक बार मैना-सुन्दरी के नाटक में धनराज जब मुनि का रोल करने के लिए मंच पर ध्यान में लीन हुए, तो वह ध्यान में ही बैठे रह गये अर्थात् नाटक का क्रम पूर्ण होने पर भी वे उठे नहीं और अन्य पात्रों ने उन्हें आवाज देकर वास्तविक ध्यान से उठाया, यह धनराज के मन में बचपन से ही पाठशाला के माध्यम से प्राप्त धार्मिक संस्कारों का पुण्यफल था। धनराज करावली में अपनी दो बहनें रतनबाई और मेवाबाई के यहाँ भी छोटी अवस्था से ही जाते थे और वहाँ भी पं. छगनलाल जी राठोड़ा वाले पाठशाला चलाते थे, जिसमें धनराज उत्साह के साथ धर्म अध्ययन करते थे।

लौकिक शिक्षा के साथ पूर्ण श्रावकचर्या-

लौकिक शिक्षा के क्रम में भी आपने शेषपुर एवं झल्लारा में प्रारंभिक पाँचवीं कक्षा तक अध्ययन किया और आगे की पढ़ाई हेतु 13 किमी. दूर सलुम्बर में जाकर एक किराये का कमरा लेकर आठवीं कक्षा तक अध्ययन किया। इस प्रकार सलुम्बर पहुँचकर भी आपने सदैव ही नित्य देव-दर्शन, णमोकार मंत्र का जाप्य, भक्तामर पाठ आदि का वाचन आदि संस्कारों को प्राप्त किया और धर्म के प्रति सदैव ही आपका श्रद्धान एवं समर्पण बना रहा। आपके हृदय में पापभीरुता एवं जिनेन्द्र भगवान के प्रति अकाट्य श्रद्धान रहा, जिसको आइये एक उदाहरण के माध्यम से जानते हैं।

''जब एक बार शेषपुर में छुट्टी के दिन धनराज और उनके सखा वेणीचंद भगवान का अभिषेक कर रहे थे, तभी गलती से धनराज के द्वारा प्रक्षालन करने में भगवान पार्श्वनाथ से युक्त पद्मावती माता की प्रतिमा गिरकर कुछ खंडित हो गयी, जिसका धनराज को अत्यन्त पश्चाताप हुआ और आँखों से

अश्रुपात होने लगा, तभी उन्होंने अपने मित्र व परिवारजन के साथ सलाह करके पण्डित चाँदमल जी को बुलाया और शांति विधान तथा मंत्रजाप्य करके प्रतिमा को जल में विसर्जित करा दिया। इसके बाद पण्डित जी व सभी परिवारजन केशरिया जी में भट्टारक यशकीर्ति जी के पास गये, जहाँ भट्टारक जी ने पुनः नवीन प्रतिमा विराजमान करने की सलाह दी एवं प्रायश्चित्त हेतु शांति मंत्र आदि दिया, जिसको धनराज ने पूर्ण विशुद्धि एवं ईमानदारी के साथ पूर्ण भी किया।''

यह एक छोटा सा कथानक है, जिसको एक बालक के मन में पापभीरुता का आदर्श उदाहरण माना जा सकता है। इसीलिए वर्तमान में भी बच्चों को पाठशालाओं में संस्कार देना तथा स्वाध्याय की श्रृँखला को सदैव प्रारंभ रखना आज की महत्वपूर्ण आवश्यकता प्रतीत होती है, क्योंकि बचपन में प्राप्त संस्कार एवं धार्मिक ज्ञान जीवन भर एक व्यक्ति के हृदय पटल पर उत्कीर्ण हो जाता है, जिसको चाहकर भी बदलना कठिन ही होता है अतः सच्चा मार्ग और सच्चा पंथ मिलने पर हमें अपने बच्चों और नवपीढ़ी को पाठशालाओं में संस्कारित करना और करवाना, यह हमारा नैतिक कर्तव्य है।

कैसे पूर्ण हुई मुनि दर्शन की अभिलाषा ?

सलुम्बर में पढ़ाई पूर्ण होने के उपरांत जब धनराज को ज्ञात हुआ कि झल्लारा में आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के शिष्य मुनि श्री देवेन्द्रकीर्ति जी महाराज आए हुए हैं, तो वे पैदल ही शेषपुर से अपने साथियों के साथ झल्लारा चले गये। मन में मुनि का दर्शन करके उनका आशीर्वाद पाने की विशेष उत्कंठा व्याप्त थी, लेकिन जब वहाँ पहुँचे, तो देखा महाराज जी उन्हीं को आशीर्वाद दे रहे हैं, जिन्होंने कोई मोटा धागा (जनेऊ) धारण किया हुआ है। फिर क्या था, धनराज को अपनी उत्कंठा तो पूर्ण करना ही था अतः उसने कहीं से मोटा धागा ढूंढ ही लिया और गले में डालकर **मुनिराज के दर्शन और उनका आशीर्वाद** तृप्ति के साथ प्राप्त किया। इस प्रकार युक्ति के साथ धनराज ने मुनि दर्शन के साथ उनका आशीर्वाद प्राप्त करने का प्रयास सफल कर लिया।

इसके साथ ही शेषपुर में भी जब क्षुल्लक श्री धर्मसागर जी महाराज

(कुरावड़ वाले) पहुँचे, तो प्रतिदिन उनकी वैयावृत्ति, आहार, विहार आदि चर्या में रुचिपूर्वक हिस्सा लेना धनराज की विशेषता बन चुकी थी।

बचपन में ही त्याग और संयम की प्रवृत्ति-

विशेषता यह है कि धनराज जब आठवीं कक्षा में पढ़ाई करते थे, तभी से उन्होंने विभिन्न नियमों को अपने जीवन में अंगीकार करना शुरू कर दिया था। यथा उन्होंने छोटी उम्र में ही रात्रि भोजन त्याग, आलू-प्याज का त्याग, होटल में भोजन का त्याग तथा इसके साथ ही दशलक्षण पर्व व अष्टमी-चतुर्दशी आदि के अवसर पर आहार-अंतराय का पालन करते हुए एकाशन-उपवास करना आदि प्रारंभ कर दिया था।

माँ की ममता का सम्मान-

एक बार जब धनराज एकाशन व्रत के दिन भोजन करने बैठे, तो उनकी पहली ग्रास में ही एक बड़ा बाल आ गया। माँ ने जब देखा, तो घबरा गई, उसने सोचा कि अब धनराज अंतराय कर देगा। तुरंत ही माँ ने बेटे को समझाना शुरू कर दिया और अपनी ममता के वशीभूत होकर उसको कहा कि बेटा इस पूरी थाली को तू छोड़ दे, मैं तेरे लिए दूसरी थाली लगा देती हूँ। जब धनराज ने देखा कि यदि मैंने अंतराय कर दिया, तो माँ अत्यन्त दुःखी हो जायेगी और इसकी ममता व करुणा को बहुत ठेस पहुँचेगी, अतः उन्होंने माँ की ममता का सम्मान करके, माँ की बात स्वीकार कर ली और दूसरी थाली में भोजन किया। यह धनराज के मन में **मातृत्व के प्रति सम्मान** का एक अनूठा एवं विवेकशील उदाहरण सभी के लिए अनुकरणीय है।

व्यवसाय, तीर्थयात्रा और ब्रह्मचर्य व्रत-

धनराज आठवीं तक सलुम्बर में लौकिक शिक्षा प्राप्त करने के उपरांत अपने बड़े भाई हीरालाल के पास अकोला (महा.) में चले गये। वहाँ भाई के साथ उनकी **पान की दुकान** पर हाथ बटाने लगे। लेकिन यहाँ भी स्वयं अपने हाथों से भोजन बनाना और नियम-व्रतों का पूर्ण पालन करना, धनराज की यह चर्या जारी रही। इसी मध्य धनराज के मन में **मांगीतुंगी व मुक्तागिरी** आदि तीर्थों की यात्रा का विचार आया और जब धनराज मुक्तागिरि सिद्धक्षेत्र का दर्शन कर मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र पहुँचे, तो वहाँ पर उन्हें एक मुनि संघ का

दर्शन हुआ। बस, यहाँ से धनराज की वैराग्यमयी कहानी का शुभारंभ हुआ। मुनिराज ने धनराज को वैराग्य का उपदेश दिया तब तत्क्षण ही धनराज ने व्यवसाय तक को भी छोड़ने का मन बना लिया और मन ही मन में **ब्रह्मचर्यव्रत** धारण कर लिया। इस प्रकार बहुत ही धार्मिक संस्कारों एवं संसार की असारता का चिंतन करते हुए पुनः आगे बड़वानी, अंदेश्वर आदि तीर्थक्षेत्रों का दर्शन करके धनराज शेषपुर में आ गये।

वैराग्य

गृहत्याग-

अप्रैल सन् 1966 में मुंगाणा (राज.) में 21 अप्रैल से 27 अप्रैल तक भगवान आदिनाथ जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव का आयोजन हुआ, जिसमें मुनि श्री वर्धमानसागर जी महाराज का सान्निध्य प्राप्त हुआ। यह समाचार जानकर धनराज भी शेषपुर से मुंगाणा के लिए प्रस्थान करने लगे। तब माँ ने उन्हें नई धोती-कमीज पहनने को दी और वे माँ की ममता और उनका आशीर्वाद समेटे घर से मुंगाणा प्रतिष्ठा महोत्सव में चले गये। यह बात कौन जानता था कि माँ ने अपने लाल को अंतिम बार नये वस्त्र पहनने को दिये थे। माँ की आँखों में तो वह लाल तारों की तरह ही टिमटिमा रहा था और सतत माँ अपने बेटे के लौटने का इंतजार कर रही थी। लेकिन धनराज तो **गृहत्याग** कर संसार के समस्त बंधनों से मुक्त हो गये थे।

इधर विवाह की तैयारी उधर क्षुल्लक दीक्षा-

धनराज के हृदय पटल में तो संसार की असारता के बीज अंकुरित हो चुके थे और ज्यों ही धनराज मुंगाणा के प्रतिष्ठा महोत्सव में पहुँचे, त्यों ही उन्होंने आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी के शिष्य मुनि श्री वर्धमानसागर जी महाराज से दीक्षा लेने की भावना अभिव्यक्त कर दी। मुनिश्री ने भी एक ही नजर में इस बालक का वैराग्यमन पढ़ लिया और कहा कि कल दीक्षाकल्याणक है, मैं तुम्हें दीक्षा दे दूँगा। बस, इधर समाज में धनराज की दीक्षा का महोत्सव शुरू हो गया और ठाट-बाट के साथ हाथी पर धनराज की बिनौरी निकाली गयी। देखते ही देखते दूसरा दिन आ गया और **वैशाख शुक्ला पंचमी, दिन-**

सोमवार, सम्वत् 2022, तदनुसार दिनाँक 25 अप्रैल 1966 को धनराज की मध्यान्ह 1 बजे हजारों भक्तों की भीड़ के मध्य मुनि श्री के करकमलों से जैनेश्वरी **''क्षुल्लक दीक्षा''** सम्पन्न हुई और दीक्षार्थी धनराज के नये नाम **''क्षुल्लक ऋषभकीर्ति''** की समूचे पाण्डाल में जय-जयकार गूंज उठी।

सबसे बड़ा आश्चर्य यह है कि धनराज की दीक्षा हो गई, लेकिन दीक्षा का समाचार भी शेषपुरवासियों अर्थात् गृहस्थ माता-पिता आदि परिवारजनों को नहीं प्राप्त हुआ, वे तो धनराज के विवाह की तैयारियाँ कर रहे थे, क्योंकि धनराज का विवाह नयागाँव (तह.-सलुम्बर) में तय भी हो चुका था। लेकिन जब ऐसी परिस्थितियों में धनराज की दीक्षा का जैसे ही समाचार प्राप्त हुआ, मानो परिवारजनों पर तो वज्रपात ही हो गया। दीक्षा का समाचार सुनते ही धनराज के बड़े भाई हीरालाल मुंगाणा आए और उन्होंने दीक्षा का विरोध किया। लेकिन सन्मार्ग में कोई कितना विरोधी बन सकता है, बस मन को यूँ है शाँत कर हीरालाल अपनी आँखों के आँसू आँखों में ही सुखाकर पुनः लौट आये। इधर वधूपक्ष ने भी निराश होकर उस कन्या का अन्यत्र विवाह कर दिया।

क्षुल्लक से ऐलक-

अब क्षुल्लक ऋषभकीर्ति जी अपनी चर्याओं का पालन करते हुए मोक्षमार्ग में अग्रसर थे और उन्होंने अपना प्रथम चातुर्मास निठाऊआ गामडी में किया। पश्चात् **सन् 1967** का द्वितीय चातुर्मास घाटोल में सम्पन्न किया। इसके बाद जब क्षुल्लक जी का विहार करावली गाँव में हुआ, जहाँ पर आचार्य श्री शिवसागर जी महाराज का 40 पिच्छियों सहित विशाल संघ आया हुआ था। चूँकि करावली क्षुल्लक ऋषभकीर्ति जी की दो बहनों की नगरी थी, जहाँ वे बचपन से ही आया-जाया करते थे, अतः इस क्षुल्लक वेष में उनका स्वागत पूरे नगर में भव्यता के साथ किया। इस बात की जानकारी आचार्य श्री शिवसागर जी महाराज को भी प्राप्त हुई और आचार्यश्री के संघस्थ आचार्यकल्प मुनि श्री श्रुतसागर जी महाराज ने क्षुल्लक ऋषभकीर्ति जी की प्रतिभा और चर्या को देखते हुए उन्हें संघ में रहने के लिए प्रेरित किया और क्षुल्लक ऋषभकीर्ति जी ने सहर्ष उनके वात्सल्य को स्वीकार करते हुए **आचार्य संघ में प्रवेश** कर लिया।

इसके पश्चात् जब संघ का विहार **बांसवाड़ा में** हुआ और **आचार्यश्री शिवसागर जी महाराज** के करकमलों से क्षुल्लक ऋषभकीर्ति जी की ऐलक दीक्षा हुई और उनका नाम **ऐलक अभिनंदनसागर** रखा गया। ये शिवसागर जी महाराज बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज की पट्ट परम्परा में प्रथम पट्टाचार्य श्री वीरसागर जी महाराज से दीक्षित उनके शिष्य थे, जो इस परम्परा के द्वितीय पट्टाचार्य हुए हैं।

ऐलक अभिनंदनसागर जी की मुनिदीक्षा-

सन् 1969 में फाल्गनु कृ. अमावस्या के दिन महावीर जी (राज.) में आचार्य श्री शिवसागर जी महाराज की एक-दो दिन की बीमारी से अचानक समाधि हो गई। तभी उनके आचार्य पट्ट पर सर्वसम्मति के साथ फाल्गुन शुक्ला अष्टमी को मुनि श्री धर्मसागर जी महाराज को तृतीय पट्टाचार्य घोषित किया गया। इस आचार्य पदारोहण की क्रिया सम्पन्न होते ही महावीर जी में **आचार्य श्री धर्मसागर जी महाराज** के करकमलों द्वारा 11 भव्य आत्माओं को जैनेश्वरी दीक्षा प्राप्त हुई। उसी में ऐलक अभिनंदनसागर जी महाराज ने भी **फाल्गुन शुक्ला अष्टमी, 24 फरवरी सन् 1969 को महावीर जी (राज.) में** मुनिदीक्षा ग्रहण कर **''मुनि श्री अभिनंदनसागर''** यह नाम प्राप्त किया था। आचार्य श्री धर्मसागर जी महाराज का यह अनूठा उदाहरण है, जब किसी मुनि ने पट्टाचार्य पद पर आसीन होते ही इतनी भव्य जैनेश्वरी दीक्षाएँ प्रदान की हों।

पश्चात् संघ का प्रथम चातुर्मास सन् 1969 में जयपुर (राज.) में हुआ, जिसमें मुनि श्री अभिनंदनसागर जी, मुनि श्री संभवसागर जी आदि सहित सम्पूर्ण साधु-संघ ने गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी से जैनागम का अध्ययन करके वर्षायोग को सार्थक किया।

उपाध्याय पद पर प्रतिष्ठापन-

पाड़वा (राज.) में सन् 1988 में 14 अप्रैल से 21 अप्रैल तक समाज द्वारा भव्य पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव का आयोजन किया गया। इस प्रतिष्ठा महोत्सव में मुनि श्री अभिनंदनसागर जी महाराज का सान्निध्य प्राप्त हुआ। प्रतिष्ठा महोत्सव का निर्देशन प्रतिष्ठाचार्य पं. मोतीलाल जी मार्तण्ड कर रहे

थे। तभी प्रतिष्ठा महोत्सव के मध्य ही सकल समाज ने मुनि श्री अभिनंदनसागर जी महाराज को उपाध्याय पद पर प्रतिष्ठापित करने का विचार किया, जिसकी संघस्थ साधुओं ने भी अनुशंसा कर दी। लेकिन मुनिश्री के मना कर देने पर समस्त समाज के लोग इस परम्परा के चतुर्थ पट्टाचार्य आचार्यश्री अजितसागर जी महाराज के समीप भीण्डर (राज.) गये और उनसे आज्ञा व आदेश लेकर आ गये। अब मुनिश्री गुरु आज्ञा के उपरांत उपाध्याय पद के लिए मना न कर सके और समस्त समाज की ओर से प्रतिष्ठाचार्य पं. मोतीलाल मार्तण्ड ने प्रतिष्ठा महोत्सव के मध्य केवलज्ञानकल्याणक के अवसर पर **दिनाँक 20 अप्रैल 1988** को मुनि श्री अभिनंदनसागर जी महाराज को **उपाध्याय पद** पर प्रतिष्ठापित करके हर्ष-उल्लास की अनुभूति की।

आचार्य पदारोहण-

बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज की पट्ट परम्परा में पंचम पट्टाचार्य श्री श्रेयांससागर जी महाराज की मार्च 1992 में बांसवाड़ा (राज.) में समाधि होने के उपरांत उस समय संघ के सबसे वरिष्ठ ब्रह्मचारी ब्र. सूरजमल जी परम्परा और संघ से जुड़े अनेक साधुओं के पास गये और आगामी आचार्य पट्ट के लिए सलाह की और सभी साधुओं द्वारा आचार्य श्री अभिनंदनसागर जी महाराज को इस परम्परा का पट्टाचार्य बनाने की स्वीकृति प्राप्त हुई। तभी **8 मार्च 1992** को शुभ मुहूर्त में **42 पिच्छीधारी साधु-साध्वियों** एवं जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर से गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी के शिष्य ब्र. रवीन्द्र कुमार जी (वर्तमान पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी) व ब्र. सूरजमल जी आदि त्यागी-वृतियों की उपस्थिति में उपाध्याय श्री अभिनंदनसागर जी महाराज को इस परम्परा का छठा पट्टाचार्य घोषित किया गया। तभी से लेकर आज तक इस परम्परा का उन्नयन आचार्य श्री अभिनंदनसागर जी महाराज कुशलता के साथ कर रहे हैं। इस आचार्य पदारोहण समारोह में हजारों की संख्या में श्रद्धालु भक्तों ने पधारकर जय-जयकार के साथ अपनी अनुमोदना भी प्रस्तुत की थी।

श्री अभिनंदनसागर जी महाराज पर भजन

तर्ज-माई रे माई.....

आओ हम सब मिलकर, गुरु के पद में शीश नमाएँ।
अभिनन्दन सागराचार्य का, दीक्षा दिवस मनाएँ।।
बोलो जय जय जय, मुनि दीक्षा उत्सव की जय।।टेक.।।

सदी बीसवीं के श्री प्रथमाचार्य, शांतिसागर थे।
पुनः वीर-शिव-धर्म तथा, आचार्य अजितसागर थे।।
पंचम पट्टाचार्य पुनः, श्रेयांस सिंधु कहलाए।
अभिनन्दन सागराचार्य का, दीक्षा दिवस मनाएँ।।
बोलो जय जय जय, मुनि दीक्षा उत्सव की जय।।1।।

इसी मूल आचार्य श्रृँखला के, आचार्य हैं षष्ठम।
अभिनन्दनसागर मुनिवर, आचार्य प्रवर हैं उत्तम।।
वर्तमान के पट्टाचार्य ये, संघ का मान बढ़ाएँ।
अभिनंदन सागराचार्य का, दीक्षा दिवस मनाएँ।।
बोलो जय जय जय, मुनि दीक्षा उत्सव की जय।।2।।

शांतिसिंधु से अभिनंदन तक, सात पीढियाँ हैं ये।
गणिनीप्रमुख ज्ञानमति माताजी, ने सब देखी हैं।।
विनय पुष्प ''चन्दनामती'' ले, गुरुचरणों में चढ़ाएँ।
अभिनन्दनसागराचार्य का, दीक्षा दिवस मनाएँ।।
बोलो जय जय जय, मुनि दीक्षा उत्सव की जय।।3।।

भजन

तर्ज–सुहानी जैनवाणी.....

दिगम्बर प्राकृतिक मुद्रा, विरागी की निशानी है।
कमण्डलु पिच्छिधारी नग्न मुनिवर की कहानी है।। टेक.।।

दिशाएँ ही बनीं अम्बर न तन पर वस्त्र ये डालें।
महाव्रत पाँच समिति और गुप्ती तीन ये पालें।।
त्रयोदश विधि चरित पालन करें जिनवर की वाणी है।।
कमण्डलु.....।।1।।

बिना बोले ही इनकी शान्त छवि ऐसा बताती है।
मुक्ति कन्यावरण में यह ही मुद्रा काम आती है।।
मोक्षपथ के पथिकजन को यही वाणी सुनानी है।
कमण्डलु.....।।2।।

यदि मुनिव्रत न पल सकता तो श्रावक धर्म मत भूलो।
देव-गुरु-शास्त्र की श्रद्धा परम कर्तव्य मत भूलो।।
बने मति 'चन्दना' ऐसी यही ऋषियों की वाणी है।।
कमण्डलु.....।।3।।

भजन

तर्ज–धरती का.....

सन्तों का तुम्हें नमन है, युग पुरुषों का वन्दन है।
प्रथमाचार्य शांतिसागर को, सौ सौ बार नमन है।।
सौ सौ बार नमन है-2।। टेक.।।

आदिनाथ से महावीर तक जिनचर्या बतलाई।
कुन्दकुन्द ने उसी तरह की मुनिचर्या अपनाई।।
शांतिसिन्धु भी उसी श्रृंखला के ही लघुनन्दन हैं।
सौ सौ बार नमन है.....।।1।।

दक्षिण भारत वसुन्धरा का है इतिहास गवाही।
भोजग्राम माँ सत्यवती का पुत्र मुक्तिपथ राही।।
प्रथम बने आचार्यप्रवर युगप्रमुख तुम्हें वन्दन है।
सौ सौ बार नमन है.....।।2।।

लुप्तप्राय यतिचर्या को जीवन्त किया था तुमने।
नग्न दिगम्बर मुद्रा को श्रुतवंत किया था तुमने।।
इसीलिए ''चन्दनामती'' जग करता तव वन्दन है।
सौ सौ बार नमन है.....।।3।।

श्री अभिनंदनसागर जी महाराज की आरती

तर्ज-दीवाना गुरुवर का.....

आरती गुरुवर की-आरती मुनिवर की,
करें सभी मिल आज आरती गुरुवर की।।टेक.।।

श्री आचार्यप्रवर कहलाए, अभिनंदनसागर जी।
संघ चतुर्विध के नायक ये, गुणमणि रत्नाकर भी।।
धर्मसिन्धु आचार्यरत्न के शिष्य प्रथम हैं आप,
आरती गुरुवर की, आरती मुनिवर की,
करें सभी मिल आज आरती गुरुवर की।।1।।

नगर शेषपुर माँ रूपाबाई की आँख के तारे।
पिता अमरचंद जी के तुम धनराज पुत्र हो प्यारे।।
धार्मिक संस्कारों में बचपन से ही पले हो आप,
आरती गुरुवर की-आरती मुनिवर की,
करें सभी मिल आज आरती गुरुवर की।।2।।

छत्तिस मूलगुणों के धारी, संघ चतुर्विध नायक।
नमन ''चन्दनामती'' वचन मन, काया से है नितप्रति।।
शांति सिन्धु की परम्परा के वर्तमान आचार्य,
आरती गुरुवर की, आरती मुनिवर की,
करें सभी मिल आज आरती गुरुवर की।।3।।